ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-3* Issue-2*March- 2018
Innovation The Research Concept

उपभोक्तावादी संस्कृति के संदर्भ में 'ब्लैक हॉल' : समय से संवाद

सारांश

साहित्य का आधार सदा से समाज रहा है। फिर चाहे वह सांस्कृतिक रूप से हो, सामाजिक रूप से या किसी और रूप ने समाज के हर उस अंग पर अनपी पैनी दृष्टि डाली है जिसका संबंध मनुष्य जाति से है। प्रेमचन्द युग के रचनाकारों ने जहां यथार्थवाद व आदर्शवाद का दामन थामा वहीं आधुनिकतावाद से प्रभावित आठवें–नवें दशक के कहानीकारों ने नगरीकरण की प्रक्रिया स्वरूप बदलती जिन्दगी की मानसिकता को नए और पुराने मूल्यों के टकराहटों के प्रतिफल के रूप में व्यक्त किया है।

संजीव नवें दशक के सशक्त कहानीकारों में से एक हैं, जिन्होंने अपनी कहानियों के जरिए वर्तमान व्यवस्था की आलोचना की है। समाज के जटिल यथार्थ को स्वीकारते हुए उसके प्रभाव से आक्रांत नई पीढ़ी की मानसिक स्थिति का विश्लेषण करते हुए समय से संवाद किया है। भूमंडलीकरण के प्रभाव स्वरूप तेजी से बदलती जिन्दगी तथा उस पर हावी होती उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण बनते बदलते विचारधाराओं का बड़ा ही मर्मान्तक चित्रण किया है। अतः इस वैश्वीकरण ने साधारण जनता को बाजार के बीचोबीच लाकर खड़ा कर दिया है। जहां सिर्फ और सिर्फ खुद को सबसे श्रेष्ठ सिद्ध करने की प्रवृत्ति अपने प्रबलतम रूप में है और यह स्थिति 21वीं सदी के समाज के लिए सबसे बड़ी चुनौती है।

पुष्पा मल्ला
शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग,
विद्यासागर विश्वविद्यालय,
मिदनापुर, पश्चिम बंगाल

मुख्य शब्द : आधुनिकता, यथार्थवाद और आदर्शवाद, नगरीकरण, मध्यवर्गीय जीवन, जादुई यथार्थ, पंचवर्षीय योजना, मौलिक अधिकार, भ्रष्टाचार, उपभोक्तावादी संस्कृति, बाजार, वैश्वीकरण सरकारी तंत्र, ब्लैक होल, तयशुदा कसौटी

प्रस्तावना

हिंदी साहित्य की आधुनिक कहानियों की परंपरा का प्रारंभ प्रेमचंद युगीन रचनाओं से देख सकते हैं। आधुनिकता के बोध से प्रभावित आधुनिक कहानियों ने अपने कहानीपन के भावबोध का विरोध नहीं किया अपितु इसने आधुनिकता के सैद्धान्तिक मान्यताओं व विचारधाराओं के संदर्भ में आधुनिक समाज में हो रहे परिवर्तन को अपने रचनाओं में परिलक्षित किया है। प्रेमचंद युग के रचनाकारों ने जहां यथार्थवाद और आदर्शवाद का दामन थामा वहीं आधुनिकतावाद से प्रभावित आठवें–नवें दशक के कहानीकारों ने नगरीकरण की प्रक्रियास्वरूप बदलती जिन्दगी की मानसिकता को नए और पुराने मूल्यों के टकराहटों के प्रतिफल के रूप में व्यक्त किया है। इस धारा के कहानीकारों ने साधारण और सीधी सपाट–सी जिन्दगी जीने वाले मध्यवर्गीय जीवन में आई कुरुपताओं, विसंगतियों और खोखलेपन की यथार्थता का अंकन किया है।

अध्ययन का उद्देश्य

हर युग का साहित्य अपनी रचनाधर्मिता के माध्यम से अपने समाज से संवाद करने का प्रयास करता है। अपने युग निर्माण की प्रवृत्तियों की जांच पड़ताल करते हुए प्रमुख मुद्दों पर बहस करता है, सिर्फ इतना ही नहीं वह तो आने वाली समस्याओं के प्रति भी सतर्क करता है। ब्लैक होल कहानी में भी यही सतर्कता नजर आई है। उपभोक्तावादी संस्कृति के इस नए वातावरण में जमने के लिए हर कोई प्रयासरत है खासकर नई पीढ़ी। जिसकी लगाम उनके माता पिता के हाथों में है और समस्या भी यहीं से शुरू होती है। इस परिपत्र को लिखने का मेरा उद्देश्य वह नई पीढ़ी है,जिसकी जिन्दगी धीरे–धीरे उपभोक्तावादी संस्कृति के हाथों उपभोग की वस्तु बनने को विवश है। भूमंडलीकरण की सूचना प्रौद्योगिकी ने 21वीं सदी के बच्चों से उनका बचपन छीन लिया है और सबसे दुखद वाली बात तो यह है कि उनके घरवाले उनकी

इस स्थिति से खुश हैं। आधुनिक बनना सही है पर उस आधुनिकता के चक्कर में मासूम बच्चों से उनका बच्चन छिनने का हक किसी को नहीं है। आये–दिन अखबारों में पढ़ाई के दबाव से आत्महत्या की कितनी सारी घटनाएं पढ़ने को मिलती हैं पर इस समस्या के समाधान की किसी को फिक्र नहीं है। समाधान केवल एक है और अच्छे से पढ़ाई करों अर्थात विद्यार्थियों पर और ज्यादा प्रेशर दी, जिसकी वजह से अब धीरे–धीरे आत्महत्या की खबरे आम हो चली है ।

आधुनिक कहानियों ने रचना का आधार उसी समाज को बनाया है, जो परंपरा से बनता आ रहा है, फर्क है तो बस वर्ग और शैली के संदर्भ में, अन्यथा विषय–वस्तु का स्वरूप वही है, जो हमेशा से रहा है।

प्रेमचंदोत्तर कहानी ने हिंदी प्रदेश के जन–जीवन के अनुभव की विविधताओं व समस्याओं की जटिलताओं को रेखांकित करने का प्रयास किया है। स्वतंत्र होने से पूर्व समाज में कुछ ऐसी धारणाएं प्रबलतम रूप में अपनी पैठ जमा चुकी थी जिनकी वजह से साहित्य में एक जटिल व जादुई यथार्थ की अवधारणा निर्मित होने लगी। उन धारणाओं में से एक, भारत सरकार की पंचवर्षीय योजना के जरिए एक उन्नतशील समाज की स्थापना जहां यह वादा था कि आम जनता को रोटी, कपड़ा और मकान जैसी मूलभूत आवश्यकताओं से वंचित नहीं रहना पड़ेगा, पर देखिए भारतीय जनता की विडंबना मौलिक अधिकार तो दूर मूलभूत जरूरते भी पूरी न हो सकी। जैसे ही भारत आजाद हुआ सरकार के रवैये भी बदल गए। सत्ता तो बदली पर शासन की शैली नहीं बदली। अपनी जरूरतों की पूर्ति हेतु समाज का मध्यमवर्ग भ्रष्टाचार के दल–दल में फंसता ही चला गया और हमारी सरकार अपने हिस्से के लाभ के लिए भ्रष्टाचार के कुएं को और गहरा करता रहा और देखते ही देखते उपभोक्तावादी संस्कृति का संजाल फैलता ही जा रहा है, जिसके चपेट में होते हुए भी होने का बोध नहीं हो रहा है। उपभोक्तावादी संस्कृति से तात्पर्य उस संस्कृति से है जहाँ उपभोग की प्रवृत्ति की प्रधानता रहे तथा क्रय शक्ति की निर्णायक भूमिका बाजार निभाये अर्थात इस उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण क्रेता, बाजार जाता तो अपनी मर्जी से है, पर सामान खरीदता है बाजार के दिखावे अनुसार। उपभोग की प्रवृत्ति ने हर मूल्यवान वस्तु को मूल्यहीन बना दिया है। इस बाजार में उन्हीं वस्तुओं का मूल्य अधिक है जो दिखने में आकर्षित हो, भले ही उसकी जरूरत गौण हो और यह दिखावे की संस्कृति नगरीय जीवन को बहुत गहराई से प्रभावित कर रही है। संजीव ने नगरीय जनजीवन की इसी स्थिति को अपनी कहानी में दिखाया है। संजीव, नवें दशक के सशक्त कहानीकारों में से एक हैं, जिसने अपनी कहानी के जरिए वर्तमान व्यवस्था की आलोचना की है। समाज के जटिल यथार्थ को स्वीकारते हुए उसके प्रभाव से आक्रांत नई पीढ़ी की मानसिक स्थिति का विश्लेषण किया है।

संजीव ने 21वीं सदी में उभर रहे निम्न मध्यमवर्ग की सामाजिक और भौतिक आकांक्षाओं के पैरों तले दब रहे नई पीढ़ी की चीख को बहुत ही प्रभावात्मक रूप से दिखाया है। कहानी के केंद्र ने श्रीमती अलका की विचारधारा, मिस्टर पी. पी. का सामाजिक अहौदा और अंकुर की मानसिक स्थिति है।

मिलिए श्रीमती अलका जी से। अलका, जिनकी उम्र चालीस छू रही थी। कुछ वर्षों पहले तक हाउस वाइफ की स्थिति में खुश थी और इस बात से भी खुश थी कि घर में अभाव भले ही हो पर उनके पति जो कि क्लर्क है का चेहरा बेदाग है। पर अब वे सिर्फ एक क्लर्क नहीं रहे बल्कि बड़े बाबू यानी ऑफिस जनरल असिस्टेंट बन गए है, लेकिन फिर भी खिंची खिंची सी रहने लगी थी। इनके हाथों में पति और पुत्र की बागडोर है। लोग कहते हैं कि स्त्रियों को सताया जा रहा है। उनका शोषण हो रहा है। वे अपनी मर्जी के मलिक नहीं है! क्या ऐसा सच में है! हो सकता है पर संजीव की कहानी की नायिका इन तथ्यों के विपरीत है। वह एक ऐसी स्त्री है जिसने इंग्लिश मीडियम से अपनी पढ़ाई पूरी की है और वह भी 20वीं सदी में। उसकी शादी परमेश्वर प्रसाद उर्फ पी पी से होती है। शादी के कुछ साल बाद एक प्यारे से बेटे का जन्म होता है। पिता, माता और पुत्र का यह परिवार बहुत ही सुखी सम्पन्न होकर अपना जीवन व्यतीत कर रहे होते हैं कि अचानक इनके जीवन में हलचल मचने लगती है। स्वयं कहानीकार के शब्दों में 'पति – पत्नी और पुत्र को लेकर गृहस्थी की छोटी सी कश्ती धीर–स्थिर जल में चली जा रही थी। तब किसे पता था कि एक समय ऐसा भी आएगा कि जल हिलकोरें लेने लगेगा और कश्ती लहरों के थपेड़ों से जूझने लगेगी।' पृष्ठ संख्या 9–10 इन लहरों के थपेड़ों से बचने के लिए अलका का सुझाया गया सुझाव परिवार को बिखेरकर रख देता है। यहाँ थपेड़ों से तात्पर्य वैश्वीकरण के प्रभाव स्वरुप आधुनिक बनने की लालसा से है। जो किसी भी कीमत पर बस आधुनिक बनना चाहती है। आधुनिक बनने की कसौटी में खरा उतरने के लिए श्रीमती अलका हर एक पड़ाव को पार करना चाहती है।

पहला पड़ाव–नाना प्रकार की सुविधाओं से सम्पन्न यानी पैसे की ताकत। अतः इसी पैसे को पाने की बात जब वह अपने पति से कहती है तो पति कहता है कि पैसे कहाँ से आएँगे इन्हें खरीदने के लिए ? उत्तर देते हुए अलका कहती है कि 'वहीं से, जहाँ तुम हो'..... 'देखने की नजर और उगाहने की कूबत चाहिए।' पृष्ठ संख्या 11

इस वाक्य में भ्रष्टाचार की हल्की सी बू आ रही है। जो कि आज की तारीख में अपने भयावह रूप में पूरे सरकारी तंत्र में फैल चुकी है और इसके, इतनी तीव्र गति से फैलने का कारण कहानिकार ने प्रत्यक्ष रूप से व्यक्त कर दिया है।

आधुनिक बनने का दूसरा पड़ाव, अंग्रेजियत की भांति वेशभूषा, श्रृंगार और बातों में अंग्रेजी पन। लेखक के शब्दों में, यथा–'अलका जी ने जैसे–तैसे पैसे जोड़कर अपने लिए कुछ नए, कुछ पुराने मॉडर्न कपड़ों का जुगाड़ किया। दो महीने में एक बार ब्यूटी पार्लर भी हो आतीं। खुद को,घर को,परिवार को कस–कुसकर उन्होंने आधुनिक बनाना शुरू कर दिया था।'.....'माँ से मम्मी, मम्मी से मॉम या ममा। अलका जी को उसके विकास पर तसल्ली होती।'

तीसरा पड़ाव बेटे का अच्छा रिजल्ट और अच्छी जॉब। अच्छे रिजल्ट से तात्पर्य केवल अव्वल यानी फर्स्ट। वह चाहती है कि उनका अंकुर पढ़ाई में अव्वल रहे। आस–पड़ोस के बच्चों से आगे रहे और अपनी इसी चाह को पूरा करने के लिए वह सुबह से लेकर रात तक अंकुर उर्फ अंक के पीछे पड़ी रहती है ताकि वह अपना एक पल भी बर्बाद न करे। इस प्रसंग में संजीव ने बच्चों के प्रति अत्यंत कठोर अनुशासन भरे रवैये को दर्शाया है, जिसका बच्चों पर नकारात्मक प्रभाव भी पड़ रहा है। जैसे कि कहानी के अंत में अंकुर का हश्र हुआ। ऐसा नहीं कि उसने कड़ी मेहनत नहीं की बल्कि उसका सारा एग्जाम अच्छा गया बस अंतिम दिन फिजिक्स का एग्जाम था, जहाँ वह हड़बड़ी या अपने मॉम द्वारा सुनाए गए वही की कहानी का असर था कि दिशाहीन होता जा रहा था। उसके दिमाग में यह बात बैठ गई थी कि 'यहाँ पास–मार्क कोई मायने नहीं रखता। मायने रखता है सौ के प्राप्तांक के करीब से करीब पहुँचना।' पृष्ठ संख्या 17 परिणामतः अंक का अंत, परंतु इस बात का जिक्र लेखक ने स्पष्ट शब्दों में नही किया है। उन्होंने बस इतना कहा है कि शनैः शब्द रोए जा रहे पी. पी. और अलकाजी की नंगी चीख के बीच तैरता पड़ा था 'अंकश' अखबारों में आए फिन बच्चों से सम्बन्धित, यह खबर पढ़ने को मिलता है कि अमुक कक्षा के विद्यार्थी ने आत्महत्या कर लिया है, तो किसी ने अच्छे अंक न आने की वजह से आत्महत्या करने की कोशिश की आदि। अंकुर के माध्यम से लेखक ने विद्यार्थियों से संबद्ध समस्याओं को भी उठाया है।

अंकुर बी. एस–सी के प्रथम वर्ष का छात्र । जो पार्ट वन की परीक्षाओं के साथ–साथ इंजीनियरिंग के एडमिशन टैस्ट की भी तैयारी कर रहा है। अंकुर के सन्दर्भ में अलका का मंतव्य गलत कतई नहीं था। कौन नहीं चाहता कि उनके बच्चे अच्छे अंकों से पास हो और कल को जाकर उन्हें अच्छी नौकरी मिले। अंक की मम्मी अलका भी यही चाहती थी। यथा –'मैं चाहती हूँ कि अंक कीड़ों–मकोड़ों की तरह नहीं, बल्कि शान से खड़ा हो– दिस मच ! है तुम्हारे पास मेरा कोई ऑल्टरनेटिव?' पृष्ठ संख्या 17,पर उनका तरीका गलत था और उन्होंने थोड़ी जल्दबाजी कर दी। वह अंक के समक्ष हमेशा यह जाहिर करती थी कि उसे फर्स्ट आना है अगर नहीं आ सका तो उसकी स्थिति महाराज के घोड़े व्ही की तरह हो जाएगी, जो हुई भी। व्ही एक घोड़ा है जिसकी कहानी सुनाते हुए अलका कहती है 'तुम्हें गंगापुर महाराज के घोड़ों के बारे में मालूम है...?' वे जॉकी की तरह चुस्त–चुस्त चलती हुई बताने लगीं, 'उनका घोड़ा व्ही हमेशा अव्वल आता था...हमेशा!'वही' माने विक्टरी, जीत। इसके लिए क्या कुछ नहीं करते थे महाराज!'

पति का प्रश्न 'हमेशा अव्वल?'

'हाँ, सिर्फ एक बार न आ सका। किए ठेकेदार ईशान अली साहब के घोड़े से जरा–सा के लिए पीछे रह गया।'

'ओ!'

'फिर जानते हो , क्या किया महाराज ने... ?'

'क्या किया?'

'गोली मार दी' पृष्ठ संख्या 16

इसी 'वही' को याद करते हुए अंक एग्जाम हॉल में न्यूमेरिकल को हल न कर पाने का एहसास धुंध–सा गहराता जाता है। हड़बड़ी में वह दिशाहीन हो जाता है और फिर 'मुट्ठी में तेजी से झरते मूल्यवान मुहूर्तों की शवयात्रा!' पृष्ठ संख्या 18..'आखिरी घंटा बजा, ना, मॉम की गोली दगी। चीन गई उत्तर पुस्तिका। हाय मॉम! मरता हुआ 'वही' अपनी चारों टांगों को ऊपर कर छटपटाता है। मद्धिम होता जा रहा है सूर्य । हाइड्रोजन का रहा–सहा अंश हीलियम में बदलता हुआ। लो, यह तो सिकुड़ने लगा ब्लैक होल। सारी आकृतियों, सारी हलचलों, सारी रोशनियों को सोखता हुआ काला सुराख!' पृष्ठ संख्या 18। विद्यार्थी उस पौधे के समान होते हैं, जो खुले वातारण में स्वछंद होकर अपने अनुकूल रसों को लेकर अपना विकास करते हैं। वे बल्किनी में उगाए गए कृतिम पौधें नहीं है। उनका विस्तार प्राकृतिक रूप से होता है, जोर जबरदस्ती से नहीं।

अब बारी है, मिस्टर परमेश्वर प्रसाद की। मिलिए इनसे – ये हैं बड़े बाबू यानी ऑफिस जनरल असिस्टेंट एवं अलका के पति और अंकुर के पिता। बहुत ही संतुलित किस्म के हैं। स्वभाव से शांत है। अपनी पत्नी और अपने बेटे से अपार स्नेह करते हैं। आधुनिक बनने की होड़ में फंसी हुई अपनी पत्नी से वह कहते हैं कि देखो डार्लिंग, यह सिस्टम ऐसा है कि एक ओर तुम्हें ललचाने, भरमाने के लिए उसकी हजार बाँहें फैली हुई हैं, दूसरी ओर है यह गलाकाटू होड़। ओनर्स प्राइड एंड नेबर्स एन्वि वाला जहर इंजेक्ट करता हुआ हमारी नसों में। जैसे एक टुकड़ा ऊपर झुलाता हुआ हम सबों को निरंतर कुत्तों में तब्दील करता जा रहा है। तुम्हें कोई लगातार हाँक रहा है–अप! अप!! दौड़ते–दौड़ते मुँह में झाग भर गया है, फिर भी दौड़ों और, और तेज से दौड़ों वरना तुम पिछड़ जाओगे। इस दौड़ में गिरे कि दूसरों की टापों से कुचलकर मर जाओगे। पृष्ठ संख्या 14। अपनी पत्नी को वह बहुत समझने की कोशिश करते हैं पर कहते हैं न कि सावन के अंधे को हर चीज हरा ही दिखता है। अलका की भी यही स्थिति है। जिसे योग्य नहीं योग्यतम चाहिए और अपनी इसी जिद को पूरा करने के लिए अपने बेटे को खो देती है।

कहानी में शुरू से लेकर अंत तक,सूत्रधार के रूप में संजीव ने अपनी उपस्थिति दर्ज की है। संजीव ने एक परिवार के माध्यम से निम्नमध्यमवर्गीय परिवार के विडंबनात्मक जीवन का रेखांकन किया है और विद्यार्थियों से सम्बंधित मुख्य समस्याओं को भी उठाया है। अतः इस प्रकार विभिन्न मुद्दों के जरिए संजीव अपने समय के माहौल से संवाद करते हुए कहानी में आदि से अंत तक एक सूत्रधार के रूप में पाए गए हैं। उन्होंने साफ शब्दों में यह कहा है कि जमाना फास्ट फूड, फास्ट लाइफ और यूज एंड थ्रो का आ गया था। इस बदलते वक्त की तेज रफ्तार के सुरताल से संगति बिठा पाने के लिए न सिर्फ तेज चलना होगा, बल्कि चलने का अंदाज भी बदलना होगा। पृष्ठ संख्या 10 समय के साथ–साथ आगे बढ़ने के लिए बदलाव की जरुरत है, पर यह मात्र बाहरी या दिखावटी न हो, अपितु बुनियादी तौर पर बदलाव हो। एक ऐसा परिवर्तन जिससे हमारा विकास हो, विनाश

नहीं। जिन्दगी के अप्रत्याशित भागदौड़ में हम इतने ज्यादा अंधे होकर दौड़ रहे है कि हमारी अपनी गति हमारे अधीन नहीं है। किसी कठपुतले की भांति हम बस दौड़े ही जा रहे हैं और सबसे विडम्बना तो यह है कि हमारा विवेक ही पीछे छुट गया है। इस तरह दौड़कर विजयी होने का क्या लाभ, यदि अंत तक हमारे अपने ही हमारे साथ न हो। हमें अपनी गति को प्रगति में परिणत करना है।

मलयालम के विशिष्ट कवि एन. वी. कृष्ण वारियर ने अपनी एक कविता सूर्य के स्वागत में मनुष्यधर्मी चेतना के बदले मनुष्यविरोधी चेतना का वर्चस्व प्रकट किया है–

हमारा सूरज क्षितिज से उतार रहा था धीरे से
परंतु हमने जल्दबाजी की
हमने सूरज को गोली मारकर गिरा दिया
फिर सागर कला हो गया
आकाश भी
भूमि भी
कालिमा बढ़ने लगी
अब भी बढ़ रही है
सूरज के रूप में जो मर गया
वह था हमारा प्रकाश
और हमारी मनुष्यता। पृष्ठ संख्या 42, (समकालीन भारतीय साहित्य, नवंबर–दिसंबर 2016)

अतः ब्लैक होल यानी काला छिद्र । एक ऐसा छिद्र जो अपनी गुरुत्वाकर्षण की शक्ति से अपने चारों तरफ के हर वस्तु एवं प्रकाश तक को अपने में समा लेती है। जिससे वस्तुएं एवं प्रकाश धीरे–धीरे लुप्त होने लगती हैं। उनका नामों निशान तक नहीं रहताय वे शून्य में परिवर्तित हो जाते हैं। ठीक ब्लैक होल की भांति ही हमारी आधुनिक बनने की होड़ हमारी सारी खुशियों व अपनों को हमसे दूर कर रही है। परिणामस्वरूप शून्य की प्राप्ति। एक ऐसा शून्य जिसमें किसी भी तरह की संवेदना नहीं है। है, तो बस यांत्रिक रूप से सोचना और विजयी बनना।

अतः इस कहानी का शीर्षक इसकी विषय वस्तु के अनुरूप है। लेखक की भाषा–शैली अति उत्तम है। स्थिति, पात्र एवं भाव के अनुसार उन्होंने शब्दों का चयन किया है। बहुत ही खूबसूरत ढंग से उन्होंने अपनी उपस्थिति दर्ज की है। कहानी पढ़ते पढ़ते कथा के मूल सन्दर्भ से कहीं पाठक भटक न जाए, यह सोचकर ही शायद उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से आकर अपनी बात कही है, पर उनके मन की बातें स्वयं पात्र कहते तो शायद और ज्यादा अच्छा होता।

निष्कर्ष

इस वैश्वीकरण ने हमें बाजार के बीचोंबीच लाकर खड़ा कर दिया है। जहाँ सिर्फ और सिर्फ खुद को सबसे श्रेष्ठ सिद्ध करने की प्रवृत्ति प्रबल है।

इस कहानी में श्रीमती की विचारधारा उस ताकत को पाने के लिए मचलती है, जिसे पाकर एक साधारण सा परिवार आधुनिक परिवार में ढल जाए। आधुनिक बनने की हर एक तयशुदा कसौटी पर खरा उतरने की प्रक्रिया के दौरान एक हँसता–खेलता परिवार के बिखरने की कथा है यह ब्लैक होल। अंततः देखते ही देखते रेसकोर्स के मैदान में तब्दील होती जिंदगी में अव्वल आने के लिए बच्चों पर लादे जा रहे अमानवीय बोझ को स्पष्टतः इस कहानी ने बेहतरीन ढंग से दिखाया है। कहानीकार ने आधुनिक बनने की पूरी प्रक्रिया को परत दर परत दिखाया है और परिणामस्वरूप प्राप्त इस फल का भी कहानी के अंत में सांकेतिक रूप से जिक्र किया गया है। जहाँ कहानी का अंत एक मर्मान्तक अनुभूति के साथ होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997*
2. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997.*
3. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997*
4. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997.*
5. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997*
6. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 19977.*
7. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997*
8. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997.*
9. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997*
10. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997.*
11. *संजीव, ब्लैक होल,कहानी संग्रह, दिशा प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1997*
12. *संपादक मंडल विश्वनाथ प्रसाद तिवारी, चंद्रशेखर कंबार और के.श्रीनिवासराव, अतिथि संपादक रणजीत साहा, समकालीन भारतीय साहित्य, वर्ष 37 अंक 188, नवंबर–दिसंबर 2016,साहित्य अकादेमी की द्वैमासिक पत्रिका,लेखक सुजा. दिल्ली,पृष्ठ संख्या. 42*